International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 8 Issue 5, May 2018
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

बहुआयामी व्यक्तित्व के कुशल रचना शिल्पी : अमृतलाल नागर

डॉ. मुकुल कुमार
हिंदी शिक्षक, पेंग्विन पब्लिक स्कूल,
झपहाँ, मुजफ्फरपुर

आधुनिक हिन्दी साहित्य को जिन रचनाकारों ने विधा–वैविध्य दिया है, उनमें श्री अमृतलाल नागर अग्रगण्य हैं। प्रगतिशील विचारों के शीर्षस्थ रचनाकार अमृतलाल नागर के साहित्य में जीवन का हर रंग है, उसकी हर भंगिमा है और उसकी समग्र और सार्थक अभिव्यक्ति हुई है। नागर जी मुख्यतः कथाकार के रूप में जाने जाते हैं, किंतु वे एक महत्वपूर्ण पत्रकार भी हैं, समर्थ व्यंग्यकार भी हैं, कुशल नाटककार भी हैं, सफल अभिनेता भी हैं, योग्य निर्देशक भी हैं और महत्वपूर्ण पटकथा लेखक भी हैं। उनके सहयोग में उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व बोलता है, उनका कालखण्ड बोलता है, मनुष्यता बोलती है और नगरीय जीवन का सम्पूर्ण यथार्थ बोलता है।

अमृतलाल नागर का जन्म 17 अगस्त 1916 ई. को आगरा के एक गुजराती परिवार में हुआ था। 1929 ई. में साइमन कमीशन के विरोध में उन्होंने पहली तुकबंदी की। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में उन्होंने पहली कहानी लिखी।[1] 1935 ई. में पिताजी के निधन के बाद अठारह दिनों तक उन्होंने एक बीमा कम्पनी में डिस्पैच क्लर्क का काम किया। 1940 ई. से 1947 ई. तक मुम्बई में फिल्मों से सम्बद्ध रहे। फिल्मों में उन्होंने पटकथाएँ लिखीं, संवाद लिखे और अनेक गीतों की रचना की। लेकिन फिल्मी जगत उन्हें रास नहीं आया। 1948 ई. में वे लखनऊ लौट आये। 1953 ई. से 1956 ई. तक उन्होंने आकाशवाणी लखनऊ में ड्रामा प्रोड्यूसर का काम किया।

ड्रामा प्रोड्यूसर के रूप में उन्होंने जहाँ एक ओर स्वयं अनेक रेडियो नाटक लिखे वहीं दूसरी ओर दूसरे नाटककारों की नाट्य रचनाएँ भी रेडियो से प्रसारित की।

1956 ई. के बाद उन्होंने शुद्ध रूप से लेखन का काम किया। उनकी महत्वपूर्ण रचनाएँ निम्नलिखित हैं– 1. वाटिका (1935), 2. अवशेष (1937), 3. नवाबी मसनद (1939), 4. आदमी नहीं नहीं (1947), 5. पाँचवाँ दस्ता (1948), 6. एक दिल हजार दास्ताँ (1955), 7. एटम बम (1956), 8. पीपल की परी (1963), 9. कालदण्ड की चोरी (1963), 10. सात कहानियाँ (1970), 11. भारतपुत्र नैरंगीलाल (1972 ई.)।

उपन्यासों में– 1. महाकाल (1946), 2. बूँद और समुद्र (1956), 3. शतरंज के मोहरे (1959), 4. सुहाग के नूपुर (1960), 5. अमृत और विष (1966), 6. सात घूँघट वाला मुखड़ा (1968), 7. एकदा नैमिक्षारण्ये (1968), 8. मानस का हंस (1971), 9. नाच्यै बहुत गोपाल (1978), 10. खंजन नयन (1981), 11. बिखरे तिकने (1982), 12. अग्निधर्मा (1984), 13. करवट (1985), 14. पीढ़ियाँ (1989 ई.)।

संस्मरण, रिपोतार्ज, साक्षात्कार में– 1. गदर के फूल (1957), 2. ये कोठे वालियाँ (1960), 3. जिनके साथ जिया (1973), 4. आँखों देखा गदर।

अमृतलाल नागर अनुशासन प्रिय व्यक्ति थे। वह गुण उन्होंने विरासत में पाया था। ''बाबूजी से मै। ही नहीं सारा घर थर्राता था। उन्हें व्यवस्था और अनुशासन इस हद तक प्रिय था कि घर में किसी भी व्यक्ति के द्वारा वे इस संबंध में कोई चूक नहीं सह सकते थे। और तो और, उनके परम आराध्य, मेरी दादा–दारी तक एक जगह पर उनके इस आतंक से प्रभावित थे। बस यही गनीमत थी कि उनका यह मिशन केवल घर तक ही सीमित था। घर के बाहर अपनी विनोद–प्रियता, कलात्मक प्रतिभा और मानवीय गुणों के कारण के सबका मन सहज भाव से अपनी ओर खींच लेते थे। किसी का दुःख तो वह देख ही नहीं सकते थे, उनके सेवाभाव को प्रेरित करने के लिए यह कतई जरुरी नहीं था कि वह व्यक्ति उनका परिचित था सफेदपोश भद्रजन ही हो। उनकी लोकप्रियता का अंदाजा सन् '35 में उनकी मृत्यु होने पर लगा। एक साधारण क्लर्क की अर्थी के साथ ढाई–तीन हजार

व्यक्तियों का मजमा अकारण नहीं चल सकता था। चौक क्षेत्र का हिन्दू, मुसलमान, छोटा–बड़ा, हर वर्ग का आदमी, उनकी मिट्टी के साथ था। मेरे दादाजी बैंक के संस्थापक, ओहदेदार और शहर के सम्मानित व्यक्ति थे। सन् '28 में मृत्यु होने पर भी उन्हें ऐसा लोक–सम्मान नसीब नहीं हो पाया था। पिता का यह गुण हम तीनों भाइयों ने कम–व–वेश पाया।[2]

उनकी पत्नी एक संस्कारी महिला थीं और नागरजी को पाने के लिए उन्होंने कठोर साधना की थी। अपनी आत्मकथा उन्होंने अपनी पत्नी को समर्पित की, जिनका निधन 28 माई 1985 ई. को हुआ। नागरजी ने अपने लेखन के लिए पूरी ऊर्जा अपनी पत्नी से ही पायी थी। अपनी पत्नी की पहली मुलाकात का उल्लेख नागर जी ने इन शब्दों में किया है–''सन् '22 या '23 में मौसी के विवाह में आगरे आया था। ननिहाली घर की रंगाई–पुताई हुई थी। विवाह पूर्व की होनेवाली किसी रस्म में विरादरी की स्त्रियाँ आई थीं। तीन–चार वर्ष की एक गुड़िया–सी गोरी सुंदर लड़की अकेले में रो रही थी। मुझे दया आ गयी। जब कई बार प्यार से पूछा, तब उसने अपनी हथेली फैला दी। किवाड़ों पर लगे ताजे कोलतार की रगड़ से उसकी हथेली में काला दाग पड़ गया था। मैं कहीं से साबुन लाकर उस गुड़िया की हथेली में लगी कालिख छुड़ाने लगा। हम दोनों की आयु में केवल एक वर्ष आठ माह का अंतर था, रो मत, अभी साफ हो जायेगा। एक छोटा लड़का बड़े प्यार से छोटी–सी लड़की को समझा रहा है। किसी स्त्री ने यह दृश्य देखा। वह अन्य स्त्रियों को भी बुला लायी। मेरी माँ, एक नानी, मेरी होनेवाली सास, ददिया सास–सभी ने यह दृश्य देखा। उस गुड़िया–सी लगने वाली लड़की की दादी ऐसी रीझी कि अंततोगत्वा हम दोनों का सगाई–संबंध हो ही गया।[3]

अपने मुम्बई प्रवास और प्रगतिशील लेखक संघ से सम्बद्धता के संदर्भ में भी उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा है–''आरंभ में सौभाग्यवश मुझे भले लोगों के बीच रहने और काम करने का अवसर मिल गया। आज के दो ख्यातनाम निर्माता–निर्देशक श्री महेश कॉल और री किशोर साहू उस समय मेरे अंतरंग साथी बने। ये दोनों ही कोरे फिल्मी जीव न थे। दोनों ही ने देशी–विदेशी साहित्य का अध्ययन किया था और लघु कथायें भी लिखते थे। मैं और महेश जी साथ ही रहते थे। आरंभ में जब तक किशोरी शिवाजी पार्क में रहे उनकी माता ही हम दोनों का भी एक प्रकार से लालन–पालन करती थीं। बाद में व्यवसायिक कारणों और निजी महत्त्वाकांक्षाओं के पारस्परिक विरोधवश हम लोग दूर हो गये। उन सब बातों का सार्वजनिक चर्चा चलाने से अब कोई लाभ नहीं। उस कटुता को भूल जाने के लिए मेरे पास मिठास–भरे अनगिनत क्षणों की स्मृतियाँ आज भी सुरक्षित हैं, दूसरे अब हमारे रास्ते और कार्य–क्षेत्र भी अलग–अलग हो चुके हैं। इसीलिए स्वीकारोक्ति के इस पुण्य क्षण में यह कह देने से नहीं चुकूँगा कि हम तीनों ही अपने कार्य की विधिवत अनुसंधान करने में खूब श्रम करते थे। किशोर स्टार थे, वे किसी सिनेमा हौल की बॉक्स और बालकनी छोड़कर निचले दर्जों में बैठ नहीं पाते थे, महेश जी और मेरे लिए यह सुविधा थी कि साढ़े चार आने वाले दर्जे से लेकर महँगे दर्जे तक, हर प्रकार की जनता के साथ बैठकर उनके मत को जान सकते थे। मैंने किशोर की प्रारंभिक फिल्मों के लिए संवाद–लेखन का कार्य किया। फिल्म के एक–एक दृश्य के लिए हमलोग जमकर बहस करते थे। किशोर में शायद बॉम्बे टॉकिज की शिक्षा के कारण यह बड़ी अच्छी आदत थी कि एक बार दृश्यावली की रूप–रेखा बन जाने पर तथा संवादों द्वारा उसका विस्तार हो जाने पर वे सेट पर एक शब्द भी नहीं बदलते थे। मैं सहझता हूँ कि फिल्म क्षेत्र में किशोर की सफलता का यह एक प्रमुख कारण है।[4] उनकी अधिकतर कथाओं का संबंध लखनऊ और अवध से हैं, कुछ का संबंध अन्य प्रदेशों से है जैसे सुहाग के नुपूर का संबंध तमिलनाडु से है, भूख और चैतन्य महाप्रभु का बंगाल से। वह चाहे पुराने समाजों पर लिखे, चाहे समकालीन समाज पर, उनके साथ एक इतिहास–बोध सदा रहता है जो पात्रों को, उनके परिवेश को अतीत और भविष्य के साथ जोड़कर देखता है। रचनावली के रूप में यह चित्रावली आपको भारत के गतिशील परिवर्तनशील रूप का, उसकी अनेकरूपता और विविधता का दर्शन कराती है।[5]

अमृतलाल नागर ने अपनी अनवरत् साधना से कथा–साहित्य में सिद्धि पाई थी, किंतु नाटक उन्हें विरासत में मिला था। 'रंगमंच की यादें' शीर्षक संस्मरण में उन्होंने लिखा है–''मेरा नाटक का शौक नया नहीं पुराना है। मेरे स्व. पिता अपने समय में लखनऊ के शैकिया रंगमंच के एक श्रेष्ठ अभिनेता माने जाते थे। बचपन में स्वयं मैंने भी अपने मित्रों की टोली के साथ नाटक खेले हैं–एकाध बार स्कूल में और तीन–चार बार अपने मुहल्ले में। फिर वो शौक मेरे अंदर कहीं खो गया। सात वर्ष फिल्म व्यवसाय में रोटी कमाते हुए अक्सर संवाद–निर्देशक का काम भी मैंने किया था। इस प्रकार

वह पुराना शौक नये सिरे से जगा। सन् '48 में लखनऊ वापस आ जाने पर नाटक खिलाने का शौक सामाजिक उपयोगिता के विचार से फिर मुझे गर्माने लगा। उन दिनों मेरी पत्नी को अपने दिन के खाली समय में निर्धन घरों के नन्हें–मुन्हों को पढ़ाने का शौक था। उनकी पाठशाला के बच्चों को अक्सर शनिवार के दिन छोटे–छोटे नाटक और कभी–कभी छाया नाटक खिलाने लगा। मैं कल्पना के अनेक खेल उनसे रचवाता। अभिनेता बनाने से पूर्व बच्चों की कल्पनाशीलता को विकसित करना नितान्त आवश्यक है।[6]

इस प्रकार, नाटक से अमृतलाल नागर का लगाव रहा है। उन्होंने एक इन्टरव्यू में यह स्वीकार भी किया है कि नाटक का उनका संस्कार माना जा सकता है–''देखो, नाटक को मेरा संस्कार मान सकते हो। मेरे पिता स्व. श्री राजा राम नागर, लखनऊ और विशेषकर चौक में इस शती के आरम्भिक दो दशकों में शौकिया रंगमंच के अग्रणी अभिनेताओं में से थे। स्व. पं. माधव शुक्ल के निर्देशन में उन्होंने कई नाटक खेले। संभवतः 1921–22 में उनका अन्तिम नाटक देखने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ, अब तो बड़ी हल्की स्मृतियाँ शेष हैं। हमारे घर में पं. माधव शुक्ल ने उस नाटक का कुछ भाग रिहर्सल भी कराया था। चार–पाँच वर्ष की आयु थी मेरी–शुक्ल जी घर पर ठहरे थे। इसी कारण यह सुअवसर मुझे मिला। फिर स्कूल के दिनों में 'वीर अभिमन्यु' नाटक में छोटा–सा रोल मुझे मिला।''[7]

इस प्रकार, नाटक नागरजी की साहित्य–यात्रा का प्रस्थान बिन्दु है। बचपन में उन्होंने अभिनय किया, जवानी में नाटक लिखा और निर्देशन किया। आकाशवाणी लखनऊ में वे नाटक प्रोड्यूसर रहे। नाटक को उन्होंने समग्रता में परखने की चेष्टा की। उन्होंने अनेक ध्वनि नाटकों की रचना की और नाटक के शिल्प को एक नया आयाम दिया। नाटक नागर जी के लिए केन्द्रीय विधा भले ही न रही हो, किन्तु इस क्षेत्र में उन्होंने अनेक नये प्रयोग किये हैं। संख्या की दृष्टि से भी उनके नाटक कम नहीं है। उनके नाटकों में प्रखर रंगानुभूति के दर्शन होते हैं। उनका यह पक्ष अब तक नाटकों से संबंधित ग्रन्थों और शोध–प्रबन्धों में आंशिक रूप से ही विवेचित होता रहा है। इस विषय पर अबतक स्वतंत्र शोधकार्य नहीं हुआ है।

निषकर्षतः कहा जा सकता है कि नागर जी बहुआयमी व्यक्तिक्तव के एक कुशल रचनाशिल्पी थे। उन्होंने जिस विधा में लिखा पिलकर लिखा। लेखन उनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य रहा। वे समाज को एक विस्तृत फलक देने की निरंतर कोशिश की और मैं समझता हूँ कि वे उसमें पूर्णतः सफल भी रहे। उन्होंने मानवीय सरोकार, सामाजिक समरसता, समसमायिक घटना–परिघटना, सांस्कृतिक मूल्य–बोध को अपने लेखन में शामिल किया। वे एक गंभीर अध्येता थे।

संदर्भ सूची

1. अमृतलाल नागर रचानावली, सम्पादकी वक्तव्य।
2. बाबूजी, टुकड़े–टुकड़े दास्तान, अमृतलाल नागर रचनावली, दसवाँ खण्ड, पृ. 30.
3. आज के बिछुड़े न जाने कब मिलेंगे, उपर्युक्त, पृ. 41.
4. सात वर्ष के फिल्मी अनुभव, उपर्युक्त, पृ. 127.
5. भूमिका, अमृतलाल नागर रचनावली, प्रथम खण्ड, पृ. 1.
6. रंगमंच की यादें, अमृतलाल नागर रचनावली, खण्ड–10, पृ. 128.
7. राकेश मंजुल की बातचीत, सारिका, अंक–386, अगस्त, द्वितीय, 1985, पृ. 73.